Review Of Research
Vol.1,Issue.VIII/May;12pp.1-4
पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र
ISSN:-2249-894X

Research Papers

वेदो के ध्येय वाकय

पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र
मुलाकाती अध्यापक (संस्कृत विभाग)
आदिवासी कला एवं वाणिज्य कॉलेज भिलोडा,
भिलोडा

प्रस्तावना :–

भारतीय संस्कृति के प्रारम्भ में अत्यन्त प्रचीन संस्कृत साहित्य और वैद अथवा वैदिक साहित्य के रूप में देखनें में आता है। वेद गीता या बाईबल जैसा कोई एक ग्रन्थ नहीं परन्तु वेद तथा वैदिक साहित्य सेकडों वर्षो से रचा हुआ विविध प्रकार का पद्यात्मक तथा गद्यात्मक साहित्य है। इस वैदिक साहित्य में चार वैद–ऋग्वेद, अर्जूववेद, सामवेद, अथर्ववैद इसलिये की इनकी संहिता में मंत्रों, ब्राम्हण ग्रन्थो, उसके चारएमको, और उसके उपनिषद साहित्य का समावेश है।

तो, प्रथम वैद इसलिये क्या?उसके अंगो के विचार का दखे, सामान्य रूप में वेद इसलिये शान, ये शब्द विद् धातु से आया हुआ है। जेमिनी ने वैद की व्याख्यां के प्रमाण के रूप में ये कहाः

मन्त्रब्राम्हणात्मको वेदः।

साधारण वैदिक साहित्य की शुरूवात वेदा के मंत्रो (संहिता), से होती है। इन मंत्रों में अनेक देवों का उल्लेख किया है। उससे ये देवों के स्तवन और उनके अंगो का यज्ञ की विधी दर्शने का भाग है, जिसे ब्राम्हण ग्रन्थों कहा जाता है। जिसमें ब्राम्हणों द्वारा किये गये यज्ञ की तात्विक चर्चा का संकलन करनें में आया है। अन्त में उपनिषद आता है।

भारतीय संस्कृति के प्रारम्भ में वेद अत्यन्त प्राचीन थे, इसलिये प्रश्न होता है कि उसकी रचना किसने की होगी?जो कोई भी वेदों के अपौरूषेय मानने में आता है। उससे वेदों के रचियता कोई पुरूष या ऋषि नहीं, परन्तु सृष्टि के प्रारम्भ में विश्वामित्र आदि ऋषियों ने ईश्वर की कृपा से वेद मंत्रों का दर्शन किया था। उससे ऋषियों के मन्त्रकर्ता के रचियता नहीं परन्तु 'दृष्टा' है ऐसा कहा जाता है। निरूक्तकार चास्कना के मतानुसार ऋषयों मन्त्रद्रष्टारः। ऋषियां तो मन्त्रों के दर्शन कराने वाले है। वही इस प्रकार से कहा जाता है कि यज्ञयाद करते समय ऋषियों द्वारा इन वेदा मत्रों को सम्भालने के लिए उनकी 'श्रुति' तरीके पहचानने में आती है। आम अपौरूषेय ऐसे वेदो को अनादि तथा अत्यन्त पवित्र मानने में आते है। सारे विश्व में संस्कृत भाषा से जन्मी सभी भाषा जानने में आता है। उसमें इन वेदों का समस्त ज्ञान मूल है और उसमें जो हमारी हिन्दु संस्कृति उज्जवल बन रही है। अति प्राचीन वेदों के मंत्रों का सरल उच्चारण उसको कंठस्थ करने के लिए इन मन्त्रों का जटापाठ, धनपाठ आदि में विभक्त करने में आया है। षड्दर्शन के (न्याय–वैशेषिक, संख्या योग, पूर्वमीमांशा और उत्तरमीमांश–वेदान्त) विकास भी वेदों से हुआ है। शिक्षा, कल्पना, ज्योतिष, छंद, निरूकत और व्याकरण जैसे षडवेंदांगो भी वेद के कारण ही विकास हो पाया है।

उद्यानं ते पुरूष ! नावयानम् । ***अथर्ववेदः 8–1–6***

हे मानव ! तेरी उन्नति (होगी), अवनति नहीं

पुरूष ! हे मानव ! ते–तव तेरा, उद् उची, यानम् गमन, उद्यानं उत्कर्ष, उन्नति अव– अंधः नीचे, अवयानम् अद्योगति, अवनति, पतन, न–नही

ब्रेड लाने का पैसा जिसके पास नहीं था, वेसे बर्नार्ड शो. म्युजीयम के रिडींग रूम में बैठ के, शियाणा में उष्मा मेणवता, आज बर्नार्ड शोखे, विकास साध के, खुद की पुस्तक की रोयल्टी मे से म्युजीयम में 25 लाख का दान किया है।

उपर उठने की वृति और उसके महनत की प्रवृति, यह काम कर गयी।

वेदों के ऋषि, उन्नतिमूलक आर्शीवाद तो सारी मानव जाति के लिये है, परन्तु ये आर्शीवाद को सम्भालने की क्षमता तो व्यक्ति के खुद की होनी चाहिए। योग्य पात्र बनना पडता है। ऋषि कहते हे कि दृष्टि उंची रखो, लक्ष्य उंचा रखों और उसकों पाने के लिए मेहनत करों। अवनति तो कभी भी नहीं मिलेगी। स्थिर रहने के लिए भी मेहनत करों। (ज्व तनद जिमत दक जिमतए जव जंल जीम उम चसंबम) और उन्नति करने के लिए तो विशेष परिश्रम करना पडता है। ऐसे ध्यान से किये परिश्रम द्वारा शत–प्रतिशत उन्नति बनती है। दीर्घायु प्राप्ति के लिए सूकत में आता ये मंत्र यही परम सुख का मार्ग होता है, जिसकी प्राप्ति के बाद, अवनति या पतन कभी

Please cite this Article as : *पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र , वेदो के ध्येय वाकय* : Review of Research (May ; 2012)

नहीं होता है।

उगते सूर्य का पूजन संसार में सभी व्यक्ति शत प्रतिशत उत्कर्ष की जो अभिलाषा (इच्छा) सेवा है, किसी भी स्थिति में, नीचे मुख कराये तो, अग्नि की ज्वाला उपर की ओर जाती है (अधोमुखस्यापि कृतस्य वह्नेः, नाथः शिखा याति कदाचिदेव)। ये अग्नि अपना मार्गदर्शक और साथी बनती है, ऐसी यही अपेक्षा है। मानवस्य हि देहोयऽप् क्षुद्रकर्माय नेष्यते। (मानव का जन्म, तुच्छ कर्मो के लिए नहीं) सही काम करने से, पुरूष सूख की प्राप्ति पर्वत का विकास करने के लिए है।

कारवे शृणोत।

ऋग्वेद : 3–33–9

कवि को सूनो

कारवे कवि को (स्तुति करते समय) ***शृणोत*** सूनो (सम्मान दो)

नानृषिः कविः भवति। जो ऋषि नहीं, वो कवि बनता नहीं, ये सुज्ञ–वचन में कवि का ऋषि–दर्शन का स्वीकार हुआ है। उसके कान्तदर्शन को स्वीकार हुआ है।

अत्यन्त महत्ता देखने की दिव्यदृष्टि धारण करनी हो तो, कवि है और उसकी वजह से महान है।

व्यक्ति महान होता है, उसके नम्र बनने, स्तुति की विनती कर।

विश्वामित्र, ऐसे कवि है, अति तेजस्वी ये कवि ने गायंत्री–मंत्र जैसा सिद्ध मंत्र दिया। महर्षि पद के धारक ये ऋषियों नदियों की विनती कर के कवि बने।

विनती कर, उसके हमदर्द बन के सहायक के रूप के बनते है, प्रकृति के प्रतिनिधी सभी नदीयों को महानतम कर, कवि इन लोकमाताओं की विनती करते है। ऐसे नम्र कवित्व को पाये हुए चास्क मुनि भी, विश्वामित्रः सर्वमित्रः, ऐसा कह कर बिरदावे है।

कवि सर्व मित्र होता है। खेद को समझाने, सर्वजन को सूलभ बनाता हुआ और मार्गदर्शक वृति–प्रवृति दिखाता कवि, सर्वसुखाए और सर्वहिताय प्रवृति का होके, सर्वमित्र बना होता है।

नदीयों भी, पुत्र के लिए 'मां' की तरह, कवि को बढाया है। उसकी अपेक्षा पुरी की है और कवि को महत्ता को स्वीकते हुए, मा नः नि कः पुरूषत्रा (हमें नीचां गिरने नहीं देती), नमः ते (तुमको नमस्कार), ऐसा कहकर, जुककर प्रणाम करते है।

ऐसी परस्परं भावयन्तः न गीता–भावना जो, उत्कर्ष दिखने वाली है। ऋषि प्रतिभा धारण करने से महान कवियों को ये महान बनाती है।

एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति !! ***ऋग्वेदः 10–117–6***

अथर्ववेदः 1–15–28

एक जो होता छतां, विद्वानो ने अनेक रूप में वर्णन किया है।

एकं सद् (एक सत्)– ऐक (जो) होता छंता। विप्राः विद्वानो, ज्ञानियों, बहुधा अनेक प्रकार से, अनेक तरीको से, अनेक स्वरूपों में, वदन्ति कहते है, वर्णन करते है, निर्माण करते है

ऋषि, अनेक प्रकार से उपास्य तरिके, एक जो परम तत्व है, ऐसा परमात्मा यही निर्देश करता है।

ये परमात्मा है जो, इन्द्र है, सब का मित्र है, जिस तत्व का अधिष्ठता वरूण है, अग्नि है, दिव्य ऐसा धर्म और अधर्म रूपी पांबोवाणा गरूड है, प्रजाओं के नियन्त्रण कर ने हेतु यम हैख् जीवों को प्राण शक्ति देने के लिए वायु है।

संक्षेपतः, एक जो सर्वमय है, और जिसमें सब कुछ है।

एक जो परम तत्व, सम्पूर्ण विश्व में जो विद्यमान है। जिसको लोग विविध नाम और रूप से जानते है, पूजते है, किसी के न में शक्ति है, देवी है। किसी के मन में वो राम, रहीम, कृष्ण, करीम, ईशु के अहुरमद है। जहां जिसकी जैसी श्रृंद्धा जैसे स्वरूप, उसके लिए अराध्य के उपास्य बनता है। तुलसी के राम और मीरा के श्याम एक ही है।

आचार्य शंकर समझाते है कि एका सति अपि रेखा एक, दश, शत, सहस्त्रादिरूपेण भवति। एक जो रेखा, (।) उसकी लगी हुयी मीडां (उपाधि) के लिए, 1, 10, 100, 1000 आदि स्वरूप–मूल्यवान बनाती है। वैसे ही एक तत्व, विविध संदर्भ देखते विविध नाम–रूप में दर्शाते है। मूलतः, वो एक ही है। परम पिता और परम माता है, और विश्व के सभी जन उनकी संताने है, बन्धु है।

कस्मै देवाय हविषा विधेम। ***ऋग्वेद : 10–121–3***
यजुर्वेद : 25–12
अथर्ववेद : 4–2–1

हम किस देव की पूजा (अर्चना) करें?

कस्मै किसकी ('क' नाम का अनिरूप देव के नाम) देवाय देव के लिए हविषा हवि द्वारा (पूजा द्वारा), विधेम पूजा से (पूजा करके)

अथर्ववेद के, आठ मंत्र में आत्मविद्या सूक्त के प्ररूेक मंत्र का ध्रुव पद कस्मै देवाय हविषा विधेम ऐसा है। ऋग्वेद 10–121–3 सूक्त में ऐसा ही पद का भाव देखने को मिलता है। ऋग्वेद के सूक्त में ऋषि हिरण्यकगर्भ है और देव 'क' है। यही ऋषि वेन है और देव आत्मा है। यर्जूवेद–25–12 में भी यही सूक्त है। कोई अगम्य देव के 'क' की 'आत्मा' जैसे संज्ञा प्रदान की है। खुद के उपर और समग्र सृष्टि के उपर उपकार करने कोइ 'क' नाम–रूप से नहीं पहचाना जा सकता है। उसके देव यजन–पूजन के लिए ऋषि उत्सुक थे।

आत्मदा–बलदा ऐसा ये पदम देव की अनुशासन में जो बडी देवी शक्तियों के प्रवर्ति है। जो इसके अधिपति है, अमरत्व और मृत्यु जिसकी छाया में रहती है। जिससे ये समग्र विकास हुआ है, पृथ्वी और भू–लोक के आधर समा ये देवा के बिना किसकी पूजा करे? ऐसा वेनऋषियों की जिज्ञासा मूलक प्रश्न है।

बालक (सृजन सृष्टि) के जन्म के समय और उसके रचना करना के रूप में जो तेज है, उस तेज के रूप में हम उसे पुजते है। ऋषि ये सभी कल्पना को कर परम–देव की पहचान करने और अपनाने का यत्न (कौशीश) करते है।

सामवेद के तलवकार ब्राम्हण के आरएयक भाग में आये केन उपनिषद के आरम्भ में जो जिज्ञासा मूलक प्रश्न शिष्य ने गुरूजी (अध्यापक) से किया था, वैसा प्रश्न यही है। केन ?अर्थात किसको बडा मन, प्राण, वाणी, आंख, कान, आदि प्रवृत होता है?हो गयी प्रवृति (व्यक्त संसार) अनुभव कराता है, परन्तु पिछे का चालक बन अज्ञात रहता है। बल्ब, पंखों के हीटर–कूलर के प्रवृत अनुभव के रूप, परन्तु विद्युत क्या है?ये समझाया नहीं जा सकता। स्वयं के अनुभव से समझ सकते है – ऐसा ये परम ज्ञान है। ऋषि जिसे जानते है।

उद्यतेनमः।

अथर्ववेद : 17–1–22

उदय होते देव को नमस्कार।

उद्यते उदयमान हो, उदय होते हुये, तुमको, नमः नमस्कार

हम उगते हुए देव को नमस्कार करते है। ऐसा खुद के उदयमान होने के लिए आराध्यदेव के चरण में नमन करते है भक्त का, उदय के उत्कर्ष को जानने मन वंचाई जाता है।

उदयमान देव के अनुसरण में उसकी उत्कर्ष प्रवृति के अनुसर यही प्रवृति स्पष्ट होती है।

ये अम्युदयी प्रार्थना है।

'पूजे जन तो उगते रवि को', ये लोकोक्ति, सभी जनमानस व्यक्त करते है। जिसको चढना चाहिए, उसको लोग स्वीकार करते है। अवनति साधता की ओर जाने वालो से, दूर रहने को, सहज बनता है।

नये–नये सन्देश और प्रेरणा देते सूर्य को प्रातः कार्य को दिखाता कवि कहता है कि जागो, उठो, सवेरा आया, कितने नये सन्देश लाया।

प्रत्यक्ष जैसे विष्णु भगवान के रूप में ये सूर्य का निर्देश है, तो सूर्य, परम तूज का प्रत्यक्ष प्रमाण है। जो प्रकाश की ज्योति है। महाकवि कालीदास, ऐसे तेजस्वी सूर्य की प्रशंसा करते हुए गाते हैः

Please cite this Article as : *पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र , वेदो के ध्येय वाकय* **: Review of Research (May ; 2012)**

सूर्य तपत्यावरणाय दृष्टेः
कल्पेत लोकस्य कर्थं तमिस्त्रः।

जब सूर्य दिप्तीमान हो, तब लोगों की आंखों को ढंकती अन्धकार कैसे हो सकती है?

उदयमान सूर्य की दिव्यता और महत्ता व्यक्त करते महात्मा गांधी कहते थे कि सूर्योदय में जो नाटक किया है, जो सून्दरता रचि है और जो लिला रचि है, वो ओर कही नहीं मिल सकती।

उदयगिरिमुपेतं भास्करं– सुरविरमभिवन्दे (उदय होते देवातिदेव, ज्योति को फैलाने वाले को प्रणाम, ऐसा कवि कहते है।)

केवलाघो भवति केवलादी। ***ऋग्वेदः 10–117–6***
जो अकेला अकेला खाता है, वो पाप खाता है।

केवलाघो अकेला अकेला खाता हुआ, भोग लगाता हुआ, केवलादी केवण पाप खाता है, भवति बने है
ऋग्वेद के ऋषि ने अति उदान्त भावना यही व्यक्त की है।

खुद को जो कुछ भी प्राप्त होता है, वो मात्र खुद को, अकेले–अकेले भोगते और माणे, ये तो पापी प्रवृति है। ऋषि, खुद की प्राप्ति को बाटनें का उपयोग करने का उपदेश देते है। बाटने की यही सिख देते है।

पाप–पुण्य की परिभाषा, इस देश में असरकारक रूप में प्रयोग की जाती रही है, कारण कि ऋषि ने ऐसे अकेले पेट को पाप खाने कहा है।

जिस समाज में व्यक्ति रहता है, खाता है, पचाता है, वस्त धारण करता है, सुख भोगता है, वो समाज के लोगों के प्रति परन्तु उसका फर्ज बनता है। उसे अन्न पैदा करने, ये समझाना है। शुद्ध पानी उसे पहाडों ने उसे लिए वस्त्र बनकर ये समझाना है। ये समाज उसे स्वस्थ अस्तित्व और अनेक आभारी है। ये सारा ऋण उसके उपर है, ये ऋण चकाने की प्रवृति सारे समाजवाद है।

तो उसके साथ बांटने से सद्भाव और प्रेम बढता है। वैमनस्य दूर होके सम्मान प्राप्त होता है।

श्री विनोबाजी, श्री रविशंकर महाराज आदि ने समाज की सही स्थिरता और शान्ती के लिए ये मार्ग शीधा बताया है।

बांटने कर खाने की वृति–प्रवृति हो तो, कोई किसी के साथ अन्याय नही करे, वेरजेर न बढे और पराया धन लेने की इच्छा न हो।

Please cite this Article as : *पण्डया विजय कुमार प्रकाशचन्द्र , वेदो के ध्येय वाकय* **: Review of Research (May ; 2012)**